श्री अक्षयतृतीया व्रत कथा

जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के अंदर राजगृह नामकी एक सुंदर नगरी है। वहाँ मेघनाद नामका महा मंडलेश्वर राजा राज्य करता था। वह रूप लावण्य से अत्यन्त सुंदर था। वह रूपवान के साथ-साथ बलवान एवं योद्धा भी था। उसकी पट्टरानी का नाम पृथ्वीदेवी था। वह अति रूपवान व जैनधर्म रत थी। उसे जैन धर्म पर पक्का श्रद्धान था। राजा मेघनाद के राज्य में सारी प्रजा प्रसन्न थी। राजा बड़े विनोद के साथ राज्य कर रहा था।

एक दिन पट्टरानी पृथ्वीदेवी अपनी अन्य सहेलियों के साथ अपने महल की सातवीं मंजिल से दिशावलोकन कर रही थी। आनंद से बैठी-बैठी विनोद की बातें कर रही थी तब उसने देखा कि बहुत से विद्यार्थी विद्या पढ़कर अपने घर आ रहे थे जो खेलने कूदने में इतने मग्न थे कि उनका सारा बदन धूल से सना हुआ था। आठों अंग खेलने में क्रियारत थे।

रानी ने बालकों की सारी क्रिया देखी तो उसका चित्त विचारमग्न हो गया। रानी को कोई पुत्र नहीं था। बालकों का अभिनय देखकर उसे अपने पुत्र न होने का दुःख हुआ। दिल में विचार किया कि जिस स्त्री के कूख से पुत्र जन्म नहीं होता उसका जीना इस संसार में वृथा है। इन्हीं विचारधाराओं के साथ वह नीचे आई तथा चिंता का शरीर बनाकर शयनकक्ष में जाकर सो गई। कुछ समय पश्चात् राजा उधर आया तो उसने रानी को इस तरह देखकर विस्मितता प्रगट की।

रानी से पूछा-प्रिये! आज आप इतनी चिंतित क्यों हो? रानी चुप रही। पुनः राजा ने प्रश्न किया, अनेक बार राजा के प्रश्न करने पर उसने जवाब दिया, हे राजन्! अपने कोई संतान नहीं है और यह समस्त राज वैभव संतान के अभाव में व्यर्थ है।

राजा ने उसे धैर्य बंधाते हुए जवाब दिया–इसमें किस के हाथ की बात है? जो होनहार होता है वह होता है। हमारे अशुभ कर्मों का उदय है इसमें चिंता करने से क्या होगा! यदि भाग्य में होगा तो अवश्य-किन्तु!

होनहार होगा वही, विधिने दिया रचाय।
'विमल' पुण्य प्रभाव से, सुख सम्पत्ति बहु पाय।।

कुछ समय बीता, नगर के बाहर उद्यान में सिद्धवरकूट चैत्यालय की वंदना हेतु पूर्व विदेह क्षेत्र में सुप्रभ नाम के चारणऋद्धिधारी मुनीश्वर आकाश मार्ग से पधारे। वनमाली यह सब देख अत्यंत प्रफुल्लित हुआ और वह गया फूलवारी के पास और अनेक प्रकार के फलफूल आदि से डाली सजाकर प्रसन्न चित्त से राजा के पास जाकर निवेदन किया–

हे राजन्! श्रीमान के उद्यान में सुप्रभ नामक चारण ऋद्धिधारी मुनिराज पधारे हैं।

राजा सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुआ। उसी समय सिंहासन से उतरकर 10 कदम आगे बढ़ मुनिराज को साष्टांग परोक्ष प्रणाम किया तथा प्रसन्नचित्त हो वनमाली को वस्त्राभूषण धनादि ईनाम देकर प्रसन्न किया।

सारे नगर में आनंद भेरी बजवाई। आनंद भेरी सुनकर सब नगर निवासियों ने राजा के साथ चारण ऋद्धिधारी मुनि की वंदना को प्रस्थान किया।

राजा ने अपने साथ में अत्यंत सुंदर अष्ट द्रव्य मुनि पूजा हेतु लिये और अनेक गाजे-बाजे-

दुन्दुभि के साथ पहुँचा, वहाँ पहुँचकर चैत्यालय की वंदना की, सर्वप्रथम चैत्यालय को तीन प्रदक्षिणा दी तथा भगवान की स्तुति- स्तवन, रूपस्तवन वा गुणस्तवन करता हुआ साष्टांग नमस्कार किया।

फिर भगवान को मणिमय सिंहासन पर विराजमान कर बड़े उत्साह से साथ पंचामृत कलशाभिषेक किया व अष्ट द्रव्यों से पूजा की। भगवत् आराधना के पश्चात् राजा मुनिराज के पास पहुँचा व नमस्कार कर चरण समीप बैठ गया और मुनिराज से प्रार्थना की- हे मुनिवर! कृपाकर धर्म श्रवण कराओ।

उधर रानी पृथ्वीदेवी (राजा की पट्टरानी ने) दोनों कर जोड़ विनम्र निवेदन किया कि हे मुनिवर! इस भव में मुझे सब सुख प्राप्त है, परन्तु संतान के अभाव में मेरा जन्म निरर्थक है।

कुछ क्षण रूककर मुनिराज ने जवाब दिया कि हे देवी! तुम्हारे अंतराय कर्म का उदय है, अस्तु तुम्हारे कोई संतान नहीं है। रानी ने पुनः निवेदन किया कि हे महाराज! ऐसा कौन सा पूर्वभव का उदय है, कृपाकर समझाइये, अर्थात् मेरे अंतराय कर्म होने का पूर्व भव सुनाइये–

भरतक्षेत्र में काश्मीर नाम का एक विशाल देश है जिसमें रत्नसंचयपुर नामका एक सुंदर नगर है। वहाँ एक वैश्य कुल में उत्पन्न श्रीवत्स नामका सेठ रहता था। जिसकी सेठानी का नाम श्रीमती था। वह अत्यंत सुंदर एवं गुणवान थी। दोनों सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करते थे। तब इसी नगर में चैत्यालय की वंदना हेतु मुनिगुप्त नाम के दिव्यज्ञान धारी मुनि अन्य 500 मुनियों के साथ पधारे।

मुनिगण के दर्शन पाकर राजा सेठ अत्यंत प्रसन्न हुआ और अपना जन्म सफल समझा। उसने मुनि महाराज को नमोस्तु कर मुनिसंघ को अपने उद्यान में ले गया। घर जाकर अपनी स्त्री श्रीमती से कहा कि तुम आहार की व्यवस्था शीघ्र करो, आज हमारा पुण्योदय है जिससे विशाल मुनि संघ का आगमन हुआ है।

किन्तु सेठानी ने सुनी-अनसुनी कर दी और कोई व्यवस्था नहीं की। सेठ स्वयं आया और शुद्धतापूर्वक बहुत से पकवान तैयार कर सात गुणों से नवधा भक्तिपूर्वक आहार दिया। सबके निरंतराय आहार से वह बहुत संतुष्ट हुआ। महाराज ने सेठ को 'अक्षयदानमस्तु' नाम का आशीर्वाद दे विहार किया।

इधर सेठानी श्रीमती अत्यंत क्रोधित हुई और अंतराय कर्म का बन्ध हो गया, उसी अंतराय कर्म से तेरे इस भव में संतान नहीं है।

रानी ने मुनि महाराज के मुँह से अपना पूर्व भव सुना तो वह अपने कुकृत्य पर अत्यंत दुःखी हुई और प्रार्थना की कि हे मुनिराज! अंतराय कर्म नष्ट हो, इसके लिए कोई उपाय बताइये जिससे मुझे संतान-सुख की प्राप्ती हो।

मुनि ने कहा–हे महादेवी! तुम अपने कर्मों का क्षय करने हेतु अक्षयतृतीया व्रत विधिपूर्वक करो। यह व्रत सर्व सुख को देने वाला तथा अपनी इष्ट पूर्ति करने वाला है।

रानी ने प्रश्न किया–हे मुनिश्वर! यह व्रत पहले किसने किया और क्या फल पाया? इसकी कथा सुनाइये–

मुनिराज ने कहा कि रानी! इसकी भी पूर्वकथा सुनो–

विशाल जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगधदेश नामका एक देश है। उसी देश में एक नदी के किनारे

सहस्त्रकूट नामका चैत्यालय स्थित है। उस चैत्यालय की वंदना हेतु एक धनिक नाम का वैश्य अपनी सुंदरी नामा स्त्री सहित गया। वहाँ कुण्डल पंडित नामका एक विद्याधर अपनी स्त्री मनोरमा देवी सहित उक्त व्रत (अक्षय तीज व्रत) का विधान कर रहे थे। उस समय (पति पत्नी) धनिक सेठ व सुंदरी नामा स्त्री ने विद्याधर युगल से पूछा कि यह आप क्या कर रहे हो-अर्थात् यह किस व्रत का विधान है?

विद्याधर ने जवाब दिया कि इस अवसर्पिणीकाल में अयोध्या नगरी में पहिले नाभिराय नाम के अंतिम मनु हुए। उनके मरुदेवी नामकी पट्टरानी थी। रानी के गर्भ में जब प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ आये तब गर्भकल्याणक उत्सव देवों ने बड़े ठाठ से मनाया और जन्म होने पर जन्मकल्याणक मनाया। फिर दीक्षाकल्याणक होने के बाद आदिनाथ जी ने छः मास तक घोर तपस्या की। छः माह के बाद चर्या (आहार) विधि के लिए आदिनाथ भगवान ने अनेक ग्राम-नगर-शहर में विहार किया किन्तु जनता को आहार की विधि मालूम न होने के कारण भगवान को धन, कन्या, पैसा, सवारी आदि अनेक वस्तु भेंट की। भगवान के यह सब अंतराय का कारण जानकर पुनः वन में पहुँच छः माह का तपश्चरण योग धारण कर लिया।

अवधि पूर्ण होने के बाद पारणा करने के लिए चर्या मार्ग से ईर्यापथ शुद्ध करते हुए ग्राम नगर में भ्रमण करते करते कुरुजांगल नामक देश में पधारे। वहाँ हस्तिनापुर नामके नगर में कुरुवंश शिरोमणि महाराजा सोम राज्य करते थे। उनके श्रेयांस नाम का एक भाई था उसने सर्वार्थसिद्धि नामक स्थान से चयकर यहाँ जन्म लिया था।

एक दिन रात्रि के समय सोते हुए उसे रात्रि के आखिरी भाग में कुछ स्वप्न आये। उन स्वप्नों में सुमेरु पर्वत, कल्पवृक्ष, सिंह, वृषभ, चंद्र-सूर्य, समुद्र, आठ मंगल-द्रव्य, यह अपने राजमहल के समक्ष स्थित हैं ऐसा उस स्वप्न में देखा, तदनंतर प्रभातबेला में उठकर उक्त स्वप्न अपने ज्येष्ठ भ्राता से कहा-तब ज्येष्ठ भ्राता सोमप्रभ ने अपने विद्वान पुरोहित को बुलाकर स्वप्नों का फल पूछा। पुरोहित ने जवाब दिया हे राजन्! आपके घर श्री आदिनाथ भगवान पारणा के लिए पधारेंगे, इससे सबको आनंद हुआ।

इधर भगवान आहार हेतु ईर्या समितिपूर्वक भ्रमण करते हुए उस नगर में राजमहल के सामने पधारे, तब सिद्धार्थ नाम का कल्पवृक्ष ही मानो अपने सामने आया है-ऐसा सबको भास हुआ। राजा श्रेयांस को आदिनाथ भगवान का श्रीमुख देखते ही उसी क्षण अपने पूर्वभव में श्रीमती व वज्रजंघ की अवस्था में एक सरोवर के किनारे दो चारण मुनियों को आहार दिया था-उसका जातिस्मरण हो गया। अतः आहार दान की समस्त विधि जानकर श्री आदिनाथ भगवान को तीन प्रदक्षिणा देकर पड़गाहन किया वा भोजनगृह में ले गये।

'प्रथम दान तीर्थ कर्ता' ऐसा वह दाता श्रेयांस राजा और उनकी धर्मपत्नी सुमतीदेवी व ज्येष्ठ बंधु सोमप्रभ राजा अपनी पत्नी लक्ष्मीमती सहित आदि सबों ने मिलकर श्री आदिनाथ भगवान को सुवर्ण कलशों द्वारा तीन खंडी (बंगाली तोल) इक्षुरस नवधा भक्तिपूर्वक आहार में दिया। तीन खंडी में से एक खंडी इक्षुरस तो अंजूली में होकर निकल गया और दो खंडीरस पेट में गया।

इस प्रकार भगवान आदिनाथ की आहार चर्या निरंतराय सम्पन्न हुई। इस कारण उसी वक्त स्वर्ग के देवों ने अत्यंत हर्षित होकर पंचाश्चर्य (रत्नवृष्टि, पुष्पवृष्टि, गंधोदक वृष्टि, देवदुंदुभि, बाजों

का बजना व जय जयकार शब्द का होना) वृष्टि की और सबों ने मिलकर अत्यंत प्रसन्नता मनाई।

आहार चर्या करके वापिस जाते हुए भगवान आदिनाथ ने सब दाताओं को 'अक्षयदानमस्तु' अर्थात् दान इसी प्रकार कायम रहे, इस आशय का आशीर्वाद दिया, यह आहार वैशाख सुदी तीज को सम्पन्न हुआ था।

जब आदिनाथ निरन्तराय आहार करके वापिस विहार कर गये, उसी समय से अक्षयतीज नाम का पुण्य दिवस प्रारंभ हुआ। (इसी को आखा तीज भी कहते हैं) यह दिन हिन्दु धर्म में भी बहुत पवित्र माना जाता है। इस रोज शादी विवाह प्रचुर मात्रा में होते हैं।

श्रेयांस राजा ने आदि तीर्थंकर को आहार देकर दान की उन्नति की, दान को प्रारंभ किया। इस प्रकार दान की उन्नति व महिमा समझकर भरतचक्रवर्ती, अकम्पन आदि राजपुत्र व सपरिवारसहित श्रेयांस व उनके सह राजाओं का आदर से साथ सत्कार किया। प्रसन्नचित्त हो अपने नगर को वापिस आये।

उक्त सर्व वृतांत (कथा) सुप्रभनाम के चारण मुनि के मुख से पृथ्वीदेवी ने एकाग्रचित्त से श्रवण किया। वह बहुत प्रसन्न हुई। उसने मुनि को नमस्कार किया तथा उक्त अक्षयतीज व्रत को ग्रहण करके सर्व जन परिजन सहित अपने नगर को वापिस आये। पृथ्वीदेवी ने (समयानुसार) उस व्रत को विधि अनुसार सम्पन्न किया। पश्चात् यथाशक्य उद्यापन किया। चारों प्रकार के दान चारों संघ को बांटे। मंदिरों में मूर्तियाँ विराजमान की। चमर, छत्र आदि बहुत से वस्त्राभूषण मंदिर जी को भेंट चढ़ाये।

उक्त व्रत के प्रभाव से उसने 32 पुत्र और 32 कन्याओं को जन्म दिया। साथ ही बहुत सा वैभव और धन कंचन आदि ऐश्वर्य से समृद्ध होकर बहुत काल तक अपने पति सहित राज्य का भोग किया और अनंत ऐश्वर्य को प्राप्त किया।

पश्चात् वह दम्पति वैराग्य प्रवर होकर जिनदीक्षा धारण करके 'तपश्चर्या' करने लगे और तपोबल से मोक्ष सुख को प्राप्त किया। अस्तु! हे भविकजनों! तुम भी इस प्रकार अक्षय तृतीया व्रत को विधिपूर्वक पालन कर यथाशक्ति उद्यापन कर अक्षय सुख प्राप्त करो। यह व्रत सब सुखों को देने वाला है व इससे क्रमशः मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

इस व्रत की विधि इस प्रकार है-

यह व्रत वैशाख सुदी तीज से प्रारंभ होता है और वैशाख सुदी सप्तमी तक (5 दिन पर्यंत) किया जाता है। पाँचों दिन शुद्धतापूर्वक एकाशन करे या 2 उपवास और 3 एकाशन करें।

इसकी विधि यह है कि व्रत की अवधि प्रातः नैमित्तिक क्रिया से निवृत्त होकर मंदिर जी को जावें। मंदिर जी में जाकर शुद्ध भावों से भगवान की दर्शन स्तुति करें। पश्चात् भगवान को (आदिनाथ भगवान की प्रतिमा) सिंहासन पर विराजमान कर कलशाभिषेक करें। नित्य-नियम पूजा, भगवान आदि तीर्थंकर (आदिनाथ जी) की पूजा एवं पंचकल्याणक मण्डल जी मंडवाकर मण्डल की पूजा करें। तीनों काल (प्रातः मध्यान्ह, सायं) निम्नलिखित मंत्र का जाप्य (माला) करें व सामायिक करें।

मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आदिनाथ तीर्थंकराय गोमुख चक्रेश्वरी यक्ष यक्षी सहिताय नमः स्वाहा। प्रातः सायं-णमोकार मंत्र का शुद्धोच्चारण करते हुए जाप्य करें।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।

व्रत के समय में गृहादि समस्त क्रियाओं से दूर रहकर स्वाध्याय, भजन, कीर्तन आदि में समय यापन करें। रात्रि में जागरण करे। दिन भर जिनचैत्यालय में ही रहें। व्रत अवधि में ब्रह्मचर्य से रहे। हिंसादि पाँचों पापों का अणुव्रत रूप से त्याग करें। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायों को शमन करें।

पूजनादि के पश्चात् प्रतिदिन मुनीश्वरादि चार प्रकार के संघ को चारों प्रकार का दान देवें, आहार करावें, फिर स्वयं पारणा करें। प्रतिदिन अक्षय तीज व्रत की कथा सुनें व सुनावें।

(नोट-व्रत के समय स्त्री यदि रजस्वला हो जावे तो प्रतिदिन (एक) रस छोड़कर पारणा करें।)

इस प्रकार विधिपूर्वक व्रत को 5 वर्ष करें। व्रत पूर्ण होने पर यथाशक्ति उद्यापन करें। भगवान आदिनाथ की प्रतिमा मंदिरजी में स्थापित करें तथा चार संघ को चार प्रकार का दान देवें।

इस प्रकार शुद्धतापूर्वक विधिवत् व्रत करने से सर्व सुख की प्राप्ति होती है तथा साथ ही क्रम से अक्षय सुख अर्थात् मोक्ष मार्ग की प्राप्ति होती है।